UDGAM VIGYATI, Volume 2, 2015 (November)
Online ISSN 2455-2488
Page No. –72-75

''विद्यालयीन शिक्षा एवं जीवन मूल्य''

श्रीमति एकता गांयकवाड
पी.एच.डी शोधार्थी , आयडिलिक इंस्टिट्यूट ऑफ मैनेजमेंट

सारांश :–
भारतीय जीवन मूल्य भारतीय संस्कृति की अमूल्य धरोहर है। यह राष्ट्र का वह आभूषण है जिसकी आभा से विश्व पटल पर भारतीय संस्कृति दमकती है, चमकती है एवं इससे ही देश की एक अलग पहचान बनी हुई है। इन मूल्यों को बनाऍ रखना, एहसास दिलाना, मजबूती प्रदान करना एवं जहॉ आवश्यक हो इनकी पुनः स्थापना करना इस भौतिकतावादी युग में अति आवश्यक है। विद्यालयीन शिक्षा में विद्यार्थियों का आध्यात्मिक नैतिक विकास अति महत्वपूर्ण माना जाता है, विद्यार्थियों के नमारात्मक द्वष्टिकोंण को सकारात्मक द्वष्टिकोंण में परिवर्तित करना ही गुरू का कर्तव्य होता है गुरू उन्हे भारतीय संस्कृति के गौरव, रहस्यों व अद्वितीय गुणों से परिचित कराते है, शिष्य उन्हें आत्मसात् करते है

प्रस्तावना :–

भारतीय जीवन मूल्य भारतीय संस्कृति की अमूल्य धरोहर है। यह राष्ट्र का वह आभूषण है जिसकी आभा से विश्व पटल पर भारतीय संस्कृति दमकती है, चमकती है एवं इससे ही देश की एक अलग पहचान बनी हुई है। इन मूल्यों को बनाऍ रखना, एहसास दिलाना, मजबूती प्रदान करना एवं जहॉ आवश्यक हो इनकी पुनः स्थापना करना इस भौतिकतावादी युग में अति आवश्यक है।

विद्यालयीन शिक्षा में विद्यार्थियों का आध्यात्मिक नैतिक विकास अति महत्वपूर्ण माना जाता है, विद्यार्थियों के नमारात्मक द्वष्टिकोंण को सकारात्मक द्वष्टिकोंण में परिवर्तित करना ही गुरू का कर्तव्य होता है गुरू उन्हे भारतीय संस्कृति के गौरव, रहस्यों व अद्वितीय गुणों से परिचित कराते है, शिष्य उन्हें आत्मसात् करते है

अतः हम कह सकते है कि विद्या या शिक्षा के माध्यम से कर्तव्यबोध, आदर्शबोध, संस्कार बोध, बालक के विकास को नई दिशा प्रदान करते है। जो हमारे भारतीय जीवन मूल्यों को संजोकर रखने का एक सफल प्रयास है।

शिक्षा का एक चौथाई भाग गुरू, से एक चौथाई भाग सहपाठियों से, एक चौथाई भाग अपनी बुद्धि से तथा एक चौथाई भाग जीवन के अनुभव से प्राप्त करना चाहिए।

बालक का विकास अंशतः गुरू पर, अंशतः साथियों व सहपाठियों व अंशतः उसके जीवन के अनुभव पर जो उसे परिवार व समाज से मिलता है। परिवार, पड़ोस समाज व गुरू का मिला–जुला प्रयास ही बालक को विकास के इच्छित शिखर तक ले जा सकता है।

प्राथमिक शिक्षा विकास की आधार शिला है। मानव जीवन में शैवशव काल सब से सात्विक एवं लचीली अवस्था है। जीवन का प्रवाह इतना तेज होता है कि तनिक सी लापरवाही बालक को विपरीत दिशा में ले जा सकती है। इसलिये बालक के विकास के प्रति हमारा दृष्टिकोण स्पष्ट होना चाहिए।

UDGAM VIGYATI, Volume 2, 2015 (November)
Online ISSN 2455-2488
Page No. –72-75

उद्देश्य :–

1. बालक के विकास को व्यक्ति, समाज, राष्ट्र व विश्व उपयोगी सन्दर्भो में परिभाषित करना।
2. पंचकोशी विकास के विभिन्न आयाम, शारीरिक विकास, मानसिक विकास, बौद्धिक विकास, प्राणिक विकास व आत्मिक विकास को स्पष्ट करना।
3. पंचकोशी विकास की वर्तमान संदर्भ में प्रासंगिकता
4. पंचकोशी विकास पर आधारित प्राथमिक शिक्षा की संकल्पना को स्पष्ट करना।
5. बालक के विकास के साथ जुड़ी भ्रांतियों को स्पष्ट करना तथा उन्हें दूर करना।

'मनुर्भेव जनया दैव्यं जनम्'

तू मनुष्य बन और देव का निर्माण कर। वर्तमान सम्प्राप्ति से ऊपर उठकर देवत्व की ओर अग्रसर हो। विकास की इस संकल्पना का मूल मनुष्य का श्रेष्ठतम विकास है। पंचकोशी विकास की धारणा के अनुसार शरीर, प्राण, मन, बुद्धि व आत्मा मनुष्य के पांच प्रमुख अंग हैं ये पांच कोश मनुष्य के सम्पूर्ण व्यक्तित्व को निर्धारत करते है। जीवन के समस्त क्रियाकलाप उन्हीं पांच कोशों पर निर्भर हैं। शरीर माध्यम हैं सभी क्रियाओं का, मन संवेगों व भावनाओं का केन्द्र है, बुद्धि संसार को जानने समझने परखने के लिए आवश्यक है, आत्मा व प्राण जीवन तत्व हैं। बालक के विकास की यह पंचकोशी संकल्पना इस दर्शन पर आधारित है कि यदि बालक के पांच मूल तत्वों को अधिकतम विकास हो तो बालक स्वतः ही श्रेष्ठतम की ओर अग्रसर हो जायेगा।

मनुष्य का व्यक्तित्व पांचो कोशों के समन्वयन द्वारा विकसित होता है। यद्यपि प्रत्येक कोश एक विशेष क्रिया का स्त्रोत है परंतु जीवन के हर क्षेत्र में इन पांचों इकाईयों का सम्मिलित योगदान ही सफलता का रहस्य है। उदाहरण के लिये मन को ही लीजिये। मन के उद्वेगों, संवेगों व भावनाओ के संयमन के लिये बुद्धि/विवेक की आवश्यकता हैं। बुद्धि को सन्मार्ग की ओर प्रेरित करने के लिये सुसंस्कृत आत्मा का मार्गदर्शन आवश्यक है। प्राण आत्मा को बल देता है यह ऊर्जा का स्त्रोत है।

शारीरिक विकास : शरीर सभी कार्यो को पूर्ण करने का साधन है। शरीर अस्वस्थ होने पर किसी काम की इच्छा नहीं होती। मन ढीला पड़ जाता है, बुद्धि शिथिल हो जाती है। अतः प्राथमिक शिक्षा के स्तर पर उचित शारीरिक विकास का बहुत महत्व है। उदाहरणार्थ –

1. दिनचर्या में नियमबद्धता :
2. योग व व्यायाम :
3. खेल कूद :
4. स्वच्छता एवं संतुलित भोजन :

आशावादी दृष्टिकोण : जीवन के अनुभवों के प्रति हर व्यक्ति की अपनी अलग दृष्टि हो सकती है। एक सकारात्मक मनोवृति वाला व्यक्ति कठिनाइयों को चुनौती मानकर उन पर विजय प्राप्त करने का प्रयास करता है परंतु दूसरी ओर मुश्किलों से घबराकर भागने वाला व्यक्ति पराजित होकर निराश का शिकार हो जाता है। असफलता से घबराकर घर से भाग जाना, या आत्महत्या कर लेना, मानसिक कमजोरी का परिणाम है। विद्यार्थी भी प्रायः इस कमजोर मानसिकता के शिकार हो जाते है। बालक की मानसिकता को बल देना और विजय में विश्वास पैदा करना शिक्षा का उद्देश्य है। कक्षा में ही अनेक परिस्थितियॉ ऐसी होती है जहां बालक को आशा–निराशा से जूझना पड़ता है। शिक्षक उन्हीं परिस्थितियों का उपयोग कर सकता है।

UDGAM VIGYATI, Volume 2, 2015 (November)
Online ISSN 2455-2488
Page No. –72-75

जीवन मूल्य व संस्कार बोध : संस्कार हीन विकास को विकास की संज्ञा नहीं दी जा सकती। कर्त्तव्यबोध, आदर्शबोध, संस्कार बोध बालक के विकास को दिशा प्रदान करते हैं। अतः शिक्षा में इनका विशेष स्थान होना चाहिये। संस्कारो के माध्यम से बालक में श्रेष्ठ गुणों को

विकसित किया जा सकता है। भारतीय विचार पद्धति में धर्महीन विद्या को (धर्म को यहां इसके वृहत् अर्थ मे लेना चाहिये) समस्त प्रकार के अनर्थो की जननी कहा गया है। श्रेष्ठ संस्कारों का पल्लवन व पोषण बालक के विकास के महत्वपूर्ण पक्ष है। संस्कार ही समाज का संरक्षण करते हैं, व्यक्ति से व्यक्ति को जोड़ते हैं। संस्कारहीन समाज केवल समुदाय रह जाता है।

बौद्धिक विकास स्पष्टता के उद्देश्य से बौद्धिक विकास के तीन विभाजन किये जा सकते हैं, यद्यपि ये तीनों बिन्दु एक दूसरे से बहुत गहरे जुड़े हुये है।

- विवेकात्मक विकास
- ज्ञानात्मक विकास
- शैक्षिक विकास

विवेकात्मक विकास : किसी भी वस्तु या स्थिति को समझने व आंकने के लिये जिज्ञासा, मनन व चिन्तन इन तीनों गुणों का विकास अपेक्षित है।

ज्ञान : मनु के अनुसार ज्ञान के लौकिक, वैदिक व आध्यात्मिक तीन स्वरूप हैं। लौकिक ज्ञान इस लोक का ज्ञान है। अपने आस–पास के वातावरण का ज्ञान होना जरूरी है। मनुष्य अपना अधिकांश समय लौकिक ज्ञान की वृद्धि में लगाता है।

शैक्षिक विकास : ऋग्वेद में आत्मनिर्भरता को शिक्षा का प्रथम उद्देश्य माना गया है। आत्मनिर्भरता केवल रोजी–रोटी कमाने की सामर्थ्य ही नहीं है वरन् व्यक्ति की अपने पारिवाररिक, सामाजिक, राष्ट्रीय दायित्वों को निभाने की क्षमता है।

आध्यात्मिक विकास वैदिक जीवनदर्शन के अनुसार आत्मा परमात्मा का अंश है। यह अंश संसार के हर जड़ या चेतन पदार्थ में है। इसी परम–आत्मा की उपस्थिति को अंग्रेजी के प्रसिद्ध कवि वर्डस्वर्थ ने प्रकृति में देखा है।

''A motion and a spirit that impels

All thinking things, all objects of all thought

And rolls through all things''

आध्यात्मिक विकास का सिद्धांत संसार की मूलभूत एकता उद्घोषित करता है। यह उदघोषणा आज के विश्व की जरूरत है। बालक के आध्यात्मिक विकास द्वारा बालक में विनयशीलता, प्रेम, करूणा, निडरता जैसे गुणों का पोषण हो सकेगा। आत्मिक विकास का एक पहलू आत्म ज्ञान है *^Know thyself'*- स्वयं को जानने का अर्थ है अपनी क्षमताओं व कमजोरियों को पहचानना। गांधी जी ने कहा था कि जो व्यक्ति अपनी कमजोरियों को पहचानता है व उन पर जीत प्राप्त कर लेता है वह श्रेष्ठ है! ज्ञान शरीर की उपलब्धियों तक सीमित नहीं है। मन, प्राण व आत्मा के गुण–अवगुण इसके अंतर्गत आते है।

विवेकानन्द ने जब शिकागो में अपना भाषण **'प्यारे भाईयों व बहनो'** के सम्बोधन से शुरू किया तो उन्होंने समस्त संसार को एक आत्मिक रिश्ते में जोड़ दिया। शारीरिक रूप से हम सब अलग हैं, रंग–रूप अलग है। परन्तु फिर भी हम सब भाई–बहिन है। आधुनिक परिप्रेक्ष्य में बालक का आध्यात्मिक विकास पूर्ण विकास का एक अहं पहलू है।

UDGAM VIGYATI, Volume 2, 2015 (November)
Online ISSN 2455-2488
Page No. –72-75

इस प्रकार हम देखते हैं कि बालक का सम्पूर्ण विकास विभिन्न गुणों का समन्वित एवं संतुलित विकास है। विकास के पांच कोश अलग–अलग परिभाषित करने का तात्पर्य केवल इसे समझने की दृष्टि से इनके सरलीकरण का प्रयास हैं विकास के सभी बिन्दु, एक दूसरे पर निर्भर हैं। एक पक्ष की कमजोरी दूसरे पक्षों को प्रभावित करती है। अतः प्राथमिक कक्षा में विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए कि बच्चों को सभी पक्षों के विकास के समान अवसर मिलें।

संदर्भ ग्रंथ–

1. मनु के अनुसार – मनुस्मृति – पृष्ठ 56
2. विवेकानंद – विवेकानंद का शौक्षिक चिंतन – पृष्ठ 14
3. रामबाबू गुप्त – शिक्षा के तात्विक सिद्धांत – पृष्ठ 169
4. रामबाबू गुप्त – भारतीय संस्कृति का इतिहास – पृष्ठ 349
5. पत्र – पत्रिकाए
6. समाचार पत्र